गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ काण्वायनौ। इन्द्रः। गायत्री।

यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत्। स्तोता मे गोषखा स्यात्॥ ८.०१४.०१

इन्द्र। त्वम्। यथा। वस्वः- सम्पदः। एकः। वशी भवसि तथा। अहम्। ईशीय- वशी भवेयम्। मे- मम। स्तोता- शिष्य इति भावः। गोषखा- ज्ञानसम्भक्ता। स्यात्- भवेत् ॥१॥

शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे। यदहं गोपतिः स्याम्॥ ८.०१४.०२

यत्- येन कारणेन। गोपतिः- ज्ञानपालकः। स्याम्- भवेयम्। तेन कारणेन। मनीषिणे- उपदेशग्रहणयोग्याय शिष्याय। शचीपते- प्रज्ञापते। अस्मै- एतस्मै। दित्सेयम्- उपदिशेयम्। शिक्षेयम्- विद्यां दद्याम् ॥२॥

धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते। गामश्वं पिप्युषी दुहे॥ ८.०१४.०३

सुन्वते- रसनिष्पादकाय। यजमानाय- यच्छते पूजकाय। इन्द्र। ते- तव। धेनुः सूनृता- स्तुतिरूपा वाक्। पिप्युषी- प्रवर्धयित्री। गाम्- धेनूपलक्षितचिद्रश्मिम्। अश्वम्- तुरगं प्राणम्। दुहे- दोग्धि ॥३॥

न ते वर्तास्ति राधस इन्द्र देवो न मर्त्यः। यद्दित्ससि स्तुतो मघम्॥ ८.०१४.०४

यत्- यदा। स्तुतः- मन्त्रैः पूजितः। मघम्- धनम्। दित्ससि- दातुमिच्छसि तदा। इन्द्र। ते- तव। राधसः- धनस्य। वर्ता- आवारकः। देवो वा मर्त्यो वा। न कोप्यस्ति ॥४॥

यज्ञ इन्द्रमवर्धयद्यद्भूमिं व्यवर्तयत्। चक्राण ओपशं दिवि॥ ८.०१४.०५

यत्- येन कारणेन। यज्ञः। इन्द्रम्। अवर्धयत्। तेन कारणेन। इन्द्रः। दिवि- नभसि। ओपशम्- वीर्यविशेषम्। चक्राणः- कुर्वाणः। भूमिम्- पृथिवीम्। व्यवर्तयत्- विशेषेण वृष्ट्यादिप्रदानेन वर्तमानामकरोत् ॥५॥

Dr. Rangaji

वावृधानस्य ते वयं विश्वा धनानि जिग्युषः। ऊतिमिन्द्रा वृणीमहे॥ ८.०१४.०६

इन्द्र। ववृधानस्य- वर्धमानस्य। ते- तव। विश्वा- सर्वाणि। धनानि। जिग्युषः- जितवतः। ऊतिम्- रक्षाम्। वयम्। वृणीमहे- वरणं कुर्मः ॥६॥

व्य१न्तरिक्षमतिरन्मदे सोमस्य रोचना। इन्द्रो यदभिनद्वलम्॥ ८.०१४.०७

इन्द्रः। यत्- यदा। वलम्- आवरणम्। वल संवरणे। अभिनत्- बिभेद। तदा। रोचना- रोचमानम्। अन्तरिक्षम्। सोमस्य- रसस्य। मदे- हर्षे। वि- विशेषेण। अतिरत्- अवर्धयत् ॥७॥

उद्गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन्गुहा सतीः। अर्वाञ्चं नुनुदे वलम्॥ ८.०१४.०८

अङ्गिरोभ्यः- ऋषिभ्यः। गुहा सतीः- पिहितान्। गाः- रश्मीन्। आविष्कृण्वन्- प्रकटयन्। उदाजत्- उदगमयत्। वलम्- मेघम्। अर्वाञ्चम्- अधोमुखम्। नुनुदे- प्रेरितवान् ॥८॥

इन्द्रेण रोचना दिवो दृळ्हानि दृंहितानि च। स्थिराणि न पराणुदे॥ ८.०१४.०९

दिवः- नभसः। रोचना- रोचमानानि नक्षत्रादीनि। दृळ्हानि- स्वतो दृढानि। इन्द्रेण। दृंहितानि- दृढीकृतानि। च। स्थिराणि। न पराणुदे- न केनापि प्रच्यावयितुं शक्यानि ॥९॥

अपामूर्मिर्मदन्निव स्तोम इन्द्राजिरायते। वि ते मदा अराजिषुः॥ ८.०१४.१०

अपाम्- उदकानाम्। ऊर्मिः- तरङ्गः। मदन्निव- हृष्यन्निव। इन्द्र। स्तोमः- मन्त्रः। अजिरायते- क्षिप्रमुद्गच्छति। ते- तव। मदाः- हर्षाः। वि- विशेषेण। अराजिषुः- दीप्यन्ते ॥१०॥

त्वं हि स्तोमवर्धन इन्द्रास्युक्थवर्धनः। स्तोतॄणामुत भद्रकृत्॥ ८.०१४.११

त्वम्। हि- खलु। स्तोमवर्धनः- मन्त्रवर्धकः। इन्द्र। उक्थवर्धनः। असि- भवसि। उत- अपि च। स्तोतॄणाम्। भद्रकृत्- कल्याणकृत्। असि- भवसि ॥११॥

इन्द्रमित्केशिना हरी सोमपेयाय वक्षतः। उप यज्ञं सुराधसम्॥ ८.०१४.१२

Dr. Rangani

सुराधसम्- सुसंसिद्धम्। यज्ञम्- दानं देवार्चनम्। सङ्गतिकरणं प्रति। इन्द्रम्। केशिना हरी- प्राणाश्वौ। सोमपेयाय- रसानुभूतये। उप वक्षतः- आवहताम्॥१२॥

अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः। विश्वा यदजयः स्पृधः॥ ८.०१४.१३

विश्वाः- सर्वाः। स्पृधः। यत्- यदा। अजयः। तदा। अपांफेनेन- मूलशक्तिधारांशभूतबन्धनेनेत्याध्यात्मिके। नमुचेः- व्यक्तप्रकृतिगतनामरूपादिविशेषात्यन्तासक्त्याख्यबन्धप्रतीकरक्षसः। न मुञ्चतीति नमुचिरिति यास्कः। शिरः- शीर्षम्। उदवर्तयः- उद्गतमवर्तयः॥१३॥

मायाभिरुत्सिसृप्सत इन्द्र द्यामारुरुक्षतः। अव दस्यूँरधूनुथाः॥ ८.०१४.१४

मायाभिः- कापट्यैः। उत्सिसृप्सतः- उत्कृष्टभावं गन्तुमिच्छतः। इन्द्र। द्याम्- स्वर्गम्। आरुरुक्षतः- आरोढुमिच्छतः। दस्यून्- स्तेनान् वञ्चकान्। अव अधूनुथाः- अधः पातितवान्॥१४॥

असुन्वामिन्द्र संसदं विषूचीं व्यनाशयः। सोमपा उत्तरो भवन्॥ ८.०१४.१५

सोमपाः- रसानुभूतिमान्। उत्तरः- उत्कृष्टः। भवन्- सन्। इन्द्र। असुन्वाम्- रसरहिताम्। विषूची- इदमित्थमिति निर्णयहीनत्त्वान्नानागतियुक्ताम्। संसदम्। व्यनाशयः- विशेषेण नाशितवान्॥१५॥

Dr. Ranganji